eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

कबीर का कला चिन्तन

[1]श्वेता शर्मा
[1]शोधार्थी, जे0 एस0 विश्वविद्यालय शिकोहाबाद (फिरोजाबाद) उ0प्र0

Received: 17 Dec 2023, Accepted: 15 January 2024, Published online: 01 February 2024

Abstract

कबीर कलाकार थे इसलिए उन्होने कहा था, ''सबहिं मूरत बिच अमूरत, मूरत की बलिहारी।'' जो श्रेष्ठ कलाकार है उनमें ये देख रहा हूँ, अच्छी–बुरी सब मूर्तियों में अमूर्ति ही विद्यमान होता है। 'ऐसा लो नहिं तैसा मैं केहि विधि कथौं गम्भीरा लो।' सुन्दर जो असुन्दर में भी है, यह गम्भीर बात समझाकर बोलना कठिन काम, इसलिए कबीर एक ही बात में सभी तर्कों को समाप्त करते हैं। 'बिछुरी नहिं मिलिहो।' अलग होकर उसको खोज पाना सम्भव नहीं है। लेकिन ये जो सुन्दर की अखण्ड धारणा कबीर को मिली, उसके मूल में किस भाव की साधना थी, यह जानने के लिए मन सहज ही उत्सुक हो जाता है।

बीज शब्द– कबीर, कला चिन्तन, सरलता, सहजता, वाणी

Introduction

कबीर युग दृष्टा कवि थे। उनका व्यक्तित्व, उनकी वाणी युगीन परिस्थितियों की देन है। कबीर ने अपने वर्तमान को नही भोगा बल्कि भविष्य की चिरंतन समस्याओं को भी पहचाना है। कबीर का समाज जॉत–पॉत, छूआ–छूत, धार्मिक पाखण्ड, मिथ्याडंबरों, रूढ़ियों, अंधविश्वास, हिन्दू–मुस्लिम वैमनस्य, शोषण–उत्पीड़न आदि से त्रस्त तथा पथभ्रष्ट था। समाज के इस पतन में धर्म, धर्मशास्त्रों तथा धर्म के ठेकेदारों की अहम भूमिका थी। कबीर ने समय की नस को पहचाना। समाज के मार्गदर्शक हेतु एक बड़े संघर्ष एवं परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की। तत्कालीन विकृतियों और विसंगतियों के खिलाफ लड़ने की अथक दृढ़ता एवं सत्य की साधना का अदम्य साहस उन्हें जीवानुभावों से मिला। उन्होने जिन सामाजिक, सांस्कृतिक विषमताओं के खिलाफ आजीवन संघर्ष किया, वे आज भी यथावत् हैं। कबीरदास का वैचारिक आन्दोलन आज भी वर्ग–विहीन समाज के निर्माण, मानवता की बहाली प्रेम, हिन्दू–मुस्लिम सौहार्द, आडम्बरविहीन भक्ति तथा नैतिकता के निर्माण के लिए नितान्त प्रासंगिक है।

कला– कुदरत की अथाह थाती, अनगढ़ता भी गढ़े हुये से ज्यादा सुन्दर दिखने की कुब्बत युक्त, बदसूरती में भी सुन्दरता को देख लेने की लोगों की प्रवृत्ति, मंत्रमुग्ध कर देने और ग्राही के मंत्रमुग्ध हो जाने की अवस्था वर्षों से कड़ी धूप, तूफान, ओले आदि की मार सहते बड़े–बड़े चट्टानों, खंडहरों में भी कला की एक अबूझ पहेली का उग आना और शोध का विषय हो जाना, हमारे आपके ध्यान पर प्रश्न–चिन्ह लगा जाना और बेबस कर जाना ये सिद्ध करता है कि 'हम आप भी किसी फलक पर किसी महान कलाकार द्वारा निर्मित कलाकृति का एक छोटा सा हिस्सा है, जो सिर्फ कलाकार द्वारा दिये गये अन्तराल में छटपटा रहे हैं। कुछ उसी अन्तराल में निरन्तर होते हुये भी रहना सीख

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

लेते हैं तो कुछ उस छटपटाहट से ऊब–कुढ़कर अपने दायरे को विशाल करने का प्रयास करते हैं, जो उस कृति से बाहर आकर नए–नए कृतियों को सृजित करते हैं और नित नवीन सृजन के सर्वेसर्वा बना सर्जक की भूमिका में आ जाते हैं। कलाकार अज्ञात से ज्ञात की ओर बढ़ने लगता है। हालांकि बहुत कुछ प्राप्त कर लेने के बाद भी ज्ञानी अज्ञानता की परिधि में ही रहता है और तभी कुछ नया रच पाने में सक्षम भी होता है।

कबीर का कला चिन्तन – हर युग का साहित्य अपने युग का आईना होता है। उसमें युगीन चेतनायें, विसंगतियॉ एवं विद्रूपतायें अपने यथार्थ रूप में सन्निहित होतीं हैं। एक जागरूक रचनाकर केवल अपने समय को ही नहीं जीता बल्कि अपने अतीत और भविष्य में भी रचता बसता है। वह समाज से मूल्य ग्रहण कर उन्हें सवंद्धित परिस्कृत कर समाज के लिए उपयोगी सार्थक तथा स्वस्थ मूल्यों का निर्धारण करता है।

कबीर हिन्दी के महत्वपूर्ण कवि हैं। कबीर को साहित्य की मुख्य धारा से जोड़ने में रवीन्द्रनाथ टैगोर ओर विश्वभारती का अविस्मरणीय योगदान रहा है। रवीन्द्र नाि टैगोर के अलावा विश्व भारती के जिन आचार्यों का कबीर को लेकर महत्वपूर्ण काम रहा है उनमें क्षिति मोहन सेन, अवनीन्द्र नाथ टैगोर ओर हजारी प्रसाद द्विवेदी महत्वपूर्ण हैं। अवनीन्द्र नाथ टैगोर आधुनिक भारत के महत्वपूर्ण चित्रकारों में से एक हैं। कला को लेकर उन्होने बहुत कुछ लिखा है, और बोला है, सर आशुतोष मुखर्जी के बुलावे पर उन्होने कलकत्ता विश्वविद्यालय के 'बागेश्वरी व्याख्यान माला' के तहत 1921 ई0 से 1929 ई0 के बीच कला से सम्बंधित 29 व्याख्यान दिये हैं। इन व्याख्यानों में जगह–जगह कला को व्याख्यायित करने के लिये कबीर के पदों ओर विचारों का प्रयोग उन्होने किया है। इसके अलावा शिल्पी गुरू अवनीन्द्र नाथ और 'भारत शिल्पेर षड्ंग' शीर्षक पुस्तक में भी जगह–जगह कला को समझाने के लिये उन्होने कबीर को उद्धत किया है, इस आलेख में कबीर के जिन पदों को अवनीन्द्र नाथ ने उद्धत किया है, उनके अनुवाद किया गया और जो पद मिले उसने मिलाकर अनुवाद किया गया और जो पद नहीं मिल पाये उन्हें मूल बांग्ला के आधार पर हिन्दी में अनुदित किया गया।

अवनीन्द्र नाथ कबीर को सिर्फ एक कवि ही नहीं मानते थे बल्कि कला का मर्मज्ञ मानते थे। इसलिए कला को समझाने के लिए सबसे ज्यादा कबीर को उन्होने उद्धत किया है क्या यह आश्चर्यजनक नहीं है ? हिन्दी समाज ने कबीर को कवि और समाज सुधारक के रूप में जरूर रेखांकित किया है पर उनकी कविता का एक पहलू कला भी हो सकता है ऐसा सोचा ही नही है। कबीर के कला चिन्तन को अवनीन्द्र नाथ टैगोर ने जिस रूप में देखा और रेखांकित किया है। उसे लोगों के संज्ञान में लाना ही इस लेख का उद्देश्य है।

सांझ पड़े दिन बितरे चकोरी दीन्हा रोए

चलो चकोरा वह देश को जहॉ रैना न होए।

दोनों तरफ चकोर और चकोरी व्याकुल हैं कहते हैं कि एक ऐसे देश में चलो जहॉ रात नहीं होती।

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

ये पंक्तियॉ सिर्फ चित्र नहीं कवित्व गुण सम्पन्न हैं। कबीर की कविता इसलिए बहुत अच्छी लगती है, इसलिए टैगोर ने अपने व्याख्यानों में अपनी कविता के सहारे कई बार अपनी बातों की व्याख्या की है। कवि एवं चित्रकार तरंगित तथा झंकृत रेखा और लेखा की वर्णमाला में बॉध–छॉटकर रूप में रस और रस में रूप का सम्प्रदान करते हैं। अन्तः की पिचकारी बाहर को रंगती है, बाहर की पिचकारी आकर अन्तः को रंगती है।

कला का एक लक्षण होता है आडम्बरहीनता। अनावश्यक रंग और तूलिका का कल कारखाना, दबात कलम में गाजा– बाजा वह बिल्कुल सह नहीं पाता एक तूलिका, एक कागज, थोड़ा सा पानी, एक काजल लता इतने मात्र से ही पूरब के बड़े–बड़े चित्रकार अमर हो गये, कवि का काम तो इसमें भी कम हो जाता है, कवि को तो कागज और कलम, नही ंतो इकतारा और बॉसुरी, वह भी नही ंतो गले का सुर, रस की तृष्णा और शिल्प की इच्छा जिसके भीतर जागेगी वह तो किसी आयोजन की अपेक्षा करेगा नही, जैसा भी हो अपना उपाय वह स्वयं कर लेगा। एक दिन कबीर ने देखा – एक व्यक्ति चमड़े की थैली में भर–भरकर नदी से शहर में पानी ला रहा है। उस व्यक्ति को भय है कि किसी तरह नदी सूख न जाये। यह विशाल पृथ्वी नीरस न हो जाये इसलिए वह रस बॉटना चाह रहा है। कबीर ने उस व्यक्ति को पास बुलाकर उपदेश दिया।

पानी पियावत क्या फिरो, घर–घर साथर बारी

तृष्णावन्त जो होयेगा , पिबेगा ढख भारी।।

यह आयोजन क्यों, जब घर–घर में रस का सागर है ?

तृष्णा के जगने पर वे स्वयं उत्तरदायी होकर अपनी तृष्णा को मिटाने का उपाय कर लेंगे।

शिल्पकार जिसे छू देता है वही सोना हो जाता है। फिर भी बेचारा अपने बच्चों का शरीर सोने से कभी ढक नही पाता। ताजमहल के पत्थर को जिन्होने तराशा– शीशे की तरह चमकदार, दूध की तरह सफेद, मोती से भी ज्यादा लावण्ययुक्त करके उसके गुम्बद को गढ़ा, दीवार के ऊपर अमर देश की पारिजात लता को निपुण माली ने चढ़ाया, उन्हें रोज कितनी मजदूरी मिली थी ? पूरा भोजन न मिलने पर भी उनका शिल्प कहॉ क्लान हुआ ? पेट भरने के बाद कलाकारों (कारीगरों) को रोज कितना मिला होगा ? इसका हिसाब लगाने से ही पता चल पायेगा कि शिल्पकार ओर शिल्प के साथ सम्पत्ति का सम्बन्ध कैसा है। इससे कह सकते हैं कि इस यांत्रिक जीवन यात्रा में थोड़ा सा रस, थोड़ा सा शिल्प सौंदर्य, कला अगर नहीं प्रवेश पा सकें तो जीना असम्भव है।

जब कबीर के पास जाकर किसी ने कहा प्राण चला गया, रस मिला नही।

''पानी बिच मीन प्यासी, मोहि सुनि–सुनि आवै हॉसि।''

पत्थर की रेखाओं में बॅधा हुआ रूप चित्र के रंगों में बॅधी हुई रेखा, छंद में बॅधी वाणी, सुर में बॅधी बात, शिल्प पे सब कुछ उसी की निर्मिती को पकड़कर प्रकाशित हो रहा है। जो रस दिन रात झर रहा है। अखंड रस के ये सब छोटे–छोटे टुकड़े हैं एक किरण से प्रज्वलित हजार दिए,

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

एक शिल्प का विविध प्रकार, इसका अधिकार प्राप्त करने के लिए किसी आयोजन की जरूरत नहीं पड़ती। कर्म जगत के बीच में ही रस झर रहा है।

संदर्भ :–

1. रानी चन्द शिल्पी गुरू अवनीन्द्र नाथ, विश्वभारती ग्रन्थम विभाग, कोलकाता। अगहन– 1406 (नबम्बर 1999) पृ0 सं0– 81।
2. शिल्प विश्व भारती ग्रंथन विभाग, कोलकाता, 2016, पृ0–134 (अवनीन्द्र नाथ ठाकुर, भारतशिल्पेर षडंग)।
3. अवनीन्द्र नाथ ठाकुर, बागेश्वरी शिल्प प्रबंधावली, रूपा एवं कम्पनी, कोलकाता, जनवरी, 1996, पृ0 सं0–(14–18)।